समकालीन साहित्य में पर्यावरण चेतना

डॉ0 अनिल शर्मा
गणेशपुर रुड़की।

मनुष्य का पर्यावरण के साथ बहुत ही घनिष्ठ संबंध है। पर्यावरण अपने व्यापक अर्थ में जल, वायु, अंतरिक्ष सबको समेटे हुए है। हम सभी पर्यावरण से घिरे हैं। पर्यावरण से परे हमारा अस्तित्व संभव नहीं है। मनुष्य और पर्यावरण दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना संभव नहीं है। हम पर्यावरण में ही नहीं जीते, बल्कि पर्यावरण से जीते हैं और यह कहना अतिश्योक्ति नहीं है कि हमारा पर्यावरण ही हमें जीवन देता है।

महाकवि कालिदास ने 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के मंगलाचरण में कहा है कि **'प्रत्यक्षाभि : प्रपन्न स्तनुभिरवस्तुवस्ता भिरष्टाभिरीश'** अर्थात् महाकवि कालिदास ने जल, वायु, अग्नि आदि पर्यावरण के तत्त्वों को ईश्वर का प्रत्यक्ष स्वरुप कहकर अभिनंदित किया है। सदियों से जीवन और पर्यावरण की परस्पर निर्भरता भारतीय चिंतन परंपरा की एक खास पहचान रही है, परन्तु आज की कड़वी सच्चाई यह है कि हम पर्यावरण से जीवन का अमृत रस तो लेते हैं, लेकिन बदले में उसे विष देते हैं, उसमें जहर घोल देते हैं।

आज पवित्र व पूजनीय गंगा नदी उद्योगों के कचरे से अत्यधिक प्रदूषित होती जा रही है। ऋषिकेश के आगे जाने पर उसका जल स्वास्थ्य के मानदंडों पर पेय नहीं रह गया है। इस तरह देश में और भी कई नदियाँ हैं, जिनका अस्तित्व संकट में है और कई तो अपना अस्तित्व खेती नजर आ रही है।

चौदहवीं शताब्दी में मुहम्मद तुगलक के जीवनकाल में इस्लामी दुनिया का प्रसिद्ध यात्री इब्नबतूता भारत आया था। अपने संस्मरणों में उसने गंगाजल की पवित्रता और निर्मलता का उल्लेख करते हुए लिखा है कि मुहम्मद तुगलक ने जब दिल्ली छोड़कर दौलताबाद को अपनी राजधानी बनाया तो उसकी अन्य प्राथमिकताओं में अपने लिए गंगा के जल का प्रबंध भी सम्मिलित था। गंगाजल को ऊँटों, घोड़ों और हाथियों पर लादकर दौलताबाद पहुँचाने में डेढ़–दो महीने लगते थे। कहा जाता है कि गंगाजल तब भी साफ और मीठा बना रहता था। तात्पर्य यह है कि गंगाजल हमारी आस्थाओं और विश्वासों का प्रतीक इसी कारण बना था, क्योंकि वह सभी प्रकार के प्रदूषणों से मुक्त था। किन्तु अनियंत्रित औद्योगीकरण, हमारे अज्ञान एवं लोभ की प्रवृत्ति ने देश की अन्य नदियों के साथ गंगा के जल को भी प्रदूषित कर दिया है। वैज्ञानिकों का विचार है कि तन–तन की सभी बीमारियों को धो डालने की उसकी औषधीय शक्तियाँ अब समाप्त होती जा रही हैं। यदि प्रदूषण इसी गति से बढ़ता रहा तो गंगाजल के शेष गुण भी शीघ्र ही नष्ट हो जाएँगे और तब **'गंगा तेरा पानी अमृत'** वाली उक्ति निरर्थक हो जाएगी।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को आदिकाल से ही प्रमुख स्थान दिया गया है और प्रकृति के पंच महाभूतों–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के संतुलन पर ही मानव–जीवन को आधारित मानकर आहार–विहार से पर्यावरण को जोड़ा गया है। 'पर्यावरण–संरक्षण' एवं विकास को लेकर भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति, समाज और साहित्य सदैव जागरुक रहे हैं। **'गीता' में भगवान कृष्ण ने स्वयं को 'ऋतुस्वरुप', 'वृक्षस्वरुप', 'नदीस्वरुप' एवं 'पर्वतस्वरुप' बताते हुए मूलतः धर्म के माध्यम से 'पर्यावरण' के महत्व को ही रेखांकित किया है।** सच तो यह है कि जन्म से लेकर मरण तक मानव का जीवन 'पर्यावरण' से गहरे रूप में जुड़ा रहता है।

हमारे प्राचीन चिंतकों ने पर्यावरण के तीन मूल कारक माने हैं– 1. मृदा अर्थात् मिट्टी, 2. वायु एवं 3. तापमान। पूरे विश्व को ज्ञान का आलोक देने वाले वेदों में भी स्पष्ट रूप से 1. पृथ्वीलोक, 2. अंतरिक्षलोक, 3. द्युलोक माने गए हैं। **'ऋग्वेद'** में कहा गया है–

'अधिक्षियंति भूवनानि विश्वा' अर्थात् राजा बलि से दान प्राप्त करने के बाद भगवान विष्णु ने इन तीनों लोकों का विस्तार किया और तीन पगों से इन्हें नाप दिया। वेदों के अनुसार भगवान विष्णु के तीन पग वस्तुतः 'सत्य', 'रजस्', 'तमस्' हैं जो 'धर्म', 'अर्थ' एवं 'काम' के प्रतीक भी हैं। दर्शन के अनुसार इन तीनों का सामंजस्य 'सृष्टि–निर्माण' एवं 'संरक्षण' का मूलाधार है और 'पर्यावरण–संरक्षण' भी वस्तुतः इन तीनों तत्त्वों के समावेश की अपेक्षा रखता है। **'ऋग्वेद'** में देवों के लिए प्रकृति का अतिक्रमण निषिद्ध कहा गया है–

'अतिक्रम्य न गच्छन्ति मरुतः
मरुतो नाह रिष्यथ।'

निश्चय ही, जब वेद ऋषियों तक को 'प्रकृति के अतिक्रमण' से रोक देता है, तब मानव–समाज को भला कैसे प्रकृति के अतिक्रमण का अधिकार मिल सकता है?

'अथर्ववेद' का मंत्र–द्रष्टा ऋषि तो और आगे बढ़कर बहुत बड़ी और महत्त्वपूर्ण बात कहता है–

'यस्या हृदयं परमे व्योमन्।'

अर्थात् जिस प्रकार हृदय की धड़कन पर प्राणी का जीवन टिका हुआ है, उसी प्रकार अंतरिक्ष अर्थात् 'परम व्योम' की सुरक्षा में ही पृथ्वी और पर्यावरण की सुरक्षा निहित है। अंतरिक्ष रूपी 'हृदय' के नष्ट होते ही समस्त ब्रह्मांड का अस्तित्व ही नष्ट हो जायेगा।

आज दमा, कैंसर, हृदय रोग, साँस, चर्मरोग, कान–आँख और गले की भयंकर बीमारियों की वृद्धि का एकमात्र कारण 'पर्यावरण–प्रदूषण' ही है। हमने पंच महाभूतों से बने अपने शरीर के लिए पंच महाभूतों– पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश की उपेक्षा करके अपने अस्तित्व को ही चुनौती दे डाली है।

साहित्य का मुख्य पात्र और उसका मुख्य केन्द्र कोई और नहीं, आदमी और केवल आदमी है। इस आदमी की खोज साहित्य–रचना का धर्म है। यह खोज चाहे चन्द्रमा की दूधिया चाँदनी के माध्यम से हो या फिर अंधकार भरी काली रातों के माध्यम से। सारे दृश्य, सारे रंग, परिप्रेक्ष्य आदि साहित्य में अतिरिक्त सामग्री की तरह प्रयोग होते हैं, केन्द्र–बिन्दु आदमी ही रहता है। आज आदमी के लिए सबसे बड़ी चुनौती 'पर्यावरण–संरक्षण' की है, नही तो उसका अस्तित्व ही संकट में पड़ जायेगा। इसलिए समकालीन साहित्यकारों ने अपने दायित्व का निर्वहन करते हुए अपनी रचनाओं के माध्यम से न केवल पर्यावरण–संरक्षण का संदेश दिया है अपितु भविष्य में आने वाले संकटों से आगाह भी किया है।

पर्यावरण–संरक्षण का सन्देश देती हुई राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर' की यह सुन्दर ग़ज़ल देखिए–

जल के लिए तो सोचो,
कल के लिए तो सोचो।

है प्रश्न कठिन फिर भी,
हल के लिए तो सोचो।

निश्छल प्रकृति से अपने,
छल के लिए तो सोचो।

बोने से बीज पहले,
फल के लिए तो सोचो।

सौ तक जियोगे कैसे,
पल के लिए तो सोचो।।

जल अर्थात् पानी के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि इस पृथ्वी पर जीवन का उन्मेष जल में ही हुआ था। जल अर्थात् सागर में ही प्रकृति ने जीवन का रोपण किया है और वहाँ से ही धरामंडल पर जीव–जंतुओं के लिए जल एक परम आवश्यक तत्व है, लेकिन मानव समुदाय के लिए तो इसकी उपादेयता कई गुना अधिक है। इसलिए कहा भी गया है– **'जल ही जीवन है।'** श्री नंदलाल धाकरे 'मधुर' अन्य सब विषयों पर जल को प्राथमिकता देते हुए कहते हैं–

बहुत हो चुकी हैं चर्चाएं, राजा की और रानी की।
एक नई कविता गाएं हम, इस धरती पर पानी की।।
दूषित रासायनिक तत्व से, जल की निर्मलता हर ली।
बड़े गर्व से कहते हैं हम, प्रगति खूब हमने कर ली।।
गिराते हैं मल–मूत्र के नाले, नदियों के पावन जल में।
यह कैसी मानवी सभ्यता, स्वयं जा फंसी दलदल में।।
निज–सुधार की बात उठी तो, हमने आनाकानी की।
एक नई कविता गाएं हम, इस धरती पर पानी की।।

जल घटता आबादी बढ़ती, योग बड़ा दुःखदायी है।
भरती उच्छवास धरती माँ, नरता समझ न पायी है।।
जागो–जागो धरावासियों! बोल रहा है नभ–मंडल।
आने वाली है विभीषिका, कल को संचित करलो जल।।
जल बिन यात्रा शून्य बनेगी, ज्ञानी की अज्ञानी की।
एक नई कविता गाएं हम, इस धरती पर पानी की।।

डॉ0 सेवा नन्दवाल हर हाल में जल संरक्षण पर जोर देते हुए कहते हैं–

बार बार जल चिंतक
हमें चेतावनी देकर
कर रहे यूं आगाह।
अगर अब भी न जागे
तो देर हो जाएगी बहुत
फिर न मिलेगी कहीं पनाह।।
भविष्यवाणी की गई थी
तृतीय विश्व युद्ध को लेकर कि
वह पानी को लेकर ठनेगा।
लेकिन लड़ने के लिए
जीवित रहना है जरुरी
क्या बिन पानी संभव होगा?

सत्य तो यह है कि
जल संरक्षण आज जरुरत नहीं
बन गया है मजबूरी।

हम सब से रख सकते
पर पानी से मुमकिन नहीं
रखना तनिक भी दूरी।।
इसलिए जल संकट को समझ
उसके निराकरण में
अपना सर्वस्व लगाएँ।
अपनी जीवन शैली बदलें
जल का मोल पहचानें
और हर हाल में उसे बचाएँ।।

घर–घर अलख जगाने की सीख देते हुए आचार्य राकेश बाबू 'ताबिश' लिखते हैं–

घर–घर यह आंदोलन गूंजे,
घर–घर में यह नाद हो।
ऐसा जतन करें पानी की
बूंद नहीं बरबाद हो।।

एक तरफ बढ़ती आबादी,
खर्चा पानी का भारी।
दूजे पानी की बर्बादी,
करते सारे नर–नारी।।
हालत रही यही तो आगे,
समय बहुत नाशाद हो
ऐसा जतन करें पानी की
बूंद नहीं बरबाद हो।।

पीने के पानी की किल्लत,
रात दिन बढ़ती जाती।
बढ़ती हुई मुसीबत हमको,
क्यों नहीं नजर आती।।
फूंक–फूंक कर कदम रखो,
सबकी तबियत आबाद हो
ऐसा जतन करें पानी की
बूंद नहीं बरबाद हो।।

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की द्वारा प्रकाशित पत्रिका **'जल चेतना'** जल–संरक्षण के क्षेत्र में बहुत अच्छा कार्य कर रही है। इस पत्रिका के माध्यम से जल से संबंधित महत्वपूर्ण एवं उपयोगी जानकारियों को जनसामान्य तक पहुँचाया जा रहा है ताकि आने वाले समय में पानी के दुरुपयोग को कम किया जा सके तथा इसकी निरन्तर गिरती हुई गुणवत्ता पर विराम लगाया जा सके।

'जल–चेतना' में प्रकाशित **'जल जीवन का आधार'** आलेख में आचार्य राकेश बाबू 'ताबिश' ने जल संकट के कारण एवं निदान पर विस्तार से प्रकाश डाला है–

"पेय जल का भंडार धीरे–धीरे समाप्त होता जा रहा है। प्रदूषित जल का औसत बढ़ता जा रहा है। इस असंतुलन को पैदा करने में कुछ मुख्य कारण हैं,
यथा–

- वनों के अधिक कटने से वर्षा का क्रम बदल जाना और वर्षा की मात्रा में अनापेक्षित कमी आ जाना।
- जनसंख्या का अत्यधिक बढ़ता हुआ दबाव, जिससे जल का असीमित दोहन होना।
- भूमि के जल उत्सर्जन कार्य में मशीनी उपयोग से द्रुत गति से दोहन एवं जल की अत्यधिक बर्बादी।
- पेयजल का अत्यधिक दुरुपयोग करने की चिंतन विहीन मानसिकता।
- सरकार, सामाजिक संगठनों एवं जागरुक लोगों द्वारा बार–बार जल संकट के लिए आगाह किए जाने पर भी जन–मानस का लापरवाह होना।
- वर्षा–जल को संचित करने के प्रति संवेदनाओं का अभाव होना।
- भू–जल के पुनर्भरण के प्रति जागरुकता का अभाव होना।
- जल की मितव्ययता की भावना का अभाव होना।
- कृषि कार्य में सर्वाधिक प्रयोग पेयजल का ही होना।
- बहते जल स्त्रोतों को कल–कारखानों के दूषित जल, गंदे नालों एवं शव विसर्जन से प्रदूषित कर पीने योग्य न छोड़ना।

इसके अतिरिक्त अन्य भी बहुत से ऐसे कारण हो सकते हैं जो पेयजल का अभाव पैदा करने के लिए उत्तरदायी हों। किन्तु यदि हम उपरोक्त कारणों का ही निदान कर लें तो समस्या का बहुत अधिक सीमा तक हल संभव है।

- हम पानी का मूल्य समझें, मितव्ययी बनें, पानी की बर्बादी रोकें, लोगों में जागरुकता लायें।
- सरकार भी अपने दायित्वों को ईमानदारी एवं कड़ाई के साथ निभाए।
- नदियों का प्रदूषण रोका जाए एवं उनकी सफाई कराई जाए।
- वर्षा जल के संचय पर सर्वाधिक ध्यान दिया जाए।
- वर्षा जल संचय के साधन विकसित किए जाए।
- ऐसी व्यवस्था की जाए कि बाढ़ और वर्षा का जल बहकर पुनः समुद्र में न पहुँचे अपितु सीधा पृथ्वी के अन्दर जा सके ताकि भूगर्भ जल का पुनर्भरण हो सके। इसके लिए संभावित क्षेत्रों को चिन्हित करते हुए बड़े–बड़े जालीदार बोर कराकर पानी को भूगर्भ में पहुँचाया जाए।
- प्रदूषित जल का शोधन करने के साधन जुटाए जाएं।
- ऐसे बड़े तालाबों को विकसित किया जाए, जिनमें वर्षा और बाढ़ के जल को संचित कर सिंचाई में उपयोग किया जा सके।

यदि हम जल समस्या के प्रति जागरुक हैं और उसी के अनुरुप व्यवहार का आचरण करते हैं तो कुछ सीमा तक जीवन के इस अमूल्य आधार को सुरक्षित रख पाएंगे क्योंकि इसकी सुरक्षा में ही हमारे जीवन की सुरक्षा का रहस्य छिपा हुआ है। अन्यथा की स्थिति में संकट ही संकट है जो हमारे प्राणों को भी संकट में डाल सकता है। अतः हमको जागना ही होगा।"

प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ0 योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' ने अपने इन दोहों में जल संकट पर भविष्य की बड़ी चिन्ता व्यक्त की है–

कल की चिंता है अगर, सोच मनुज तू आज।
जल–संरक्षण के बिना, रोए सकल समाज।।

जल ही प्राणाधार है, जल से ही संसार।
जल–संरक्षण सब करें, जल जीवन का सार।।

जल की महिमा है अनंत, जल है ब्रह्म–स्वरुप।
जल की रक्षा कर मनुज, जीवन बने अनूप।।

पर्यावरण प्रदूषित करके आज हम स्वयं महाविनाश के घेरे में घिर गए हैं। बेतहाशा कटते जंगलों के कारण सदानीरा गंगा–यमुना का अस्तित्व संकट में है और हम आरण्यक संस्कृति को भूल कंकरीट के जंगल उगाते जा रहे हैं। कवि शचीन्द्र भटनागर ने अपने मुक्तक के माध्यम से इस महाविनाश से हमें चेताया है और सच्चाई व्यक्त की है–

हम अंजाने ही धुआँ दिन–रात पीते हैं यहाँ
घुट रहे पर्यावरण के मध्य जीते हैं यहाँ

ज़िन्दगी का भ्रम निरंतर है, मगर विस्मय यही,
उम्र के इतने बरस किस भाँति बीते हैं यहाँ।

इस वैश्विक संकट के जन्मदाता तो हम सभी हैं, सभी ने तो माँ प्रकृति का दोहन कर–करके उसे घायल कर दिया है। शचीन्द्र भटनागर की यह सटीक अभिव्यक्ति देखिए–

किन्तु हमने सूर्य की भी शक्ति का दोहन किया
व्योम, जल, पृथ्वी, पवन का भी सतत् शोषण किया
कम समय में ही अपरिमित प्राप्त करने की ललक
ने धरा पर मानवों का भारवत् जीवन किया

आदमी की नित्य बढ़ती लिप्सा, स्वार्थवादिता और भोगवृत्ति के कारण पर्यावरण–प्रदूषण का यह दैत्य निश्चय ही एक दिन हमारे लिए भस्मासुर बन जाएगा। उसी दिन की चेतावनी कवि शचीन्द्र हम सबको दे रहे हैं –

एक जंगल की बूँद को इनसान तरसेंगे यहाँ
अनगिनत साधन न कोई साथ फिर देंगे यहाँ
फट गया जिस दिन प्रबल रक्षा–कवच ओज़ोन का
व्योम से अंगार ही अंगार बरसेंगे यहाँ

ज़िंदगी चार दिन की माँगी हुई सौग़ात ही तो है, जिसे जाने किन–किन उधेड़बुनों में उलझाकर हम जीते–जी जी का जंजाल बना लेते हैं। और फिर मृग–तृष्णा में फँसे तड़पते–कलपते रहते हैं। हृदय का प्रदूषण बढ़ रहा है। शचीन्द्र जी का यह मुक्तक ऐसी ही ज़िंदगी के दर्शन कराता है –

सब गवाँ दी ज़िंदगी सुविधा जुटाने के लिए
बच न पाया एक पल हसँने–हँसाने के लिए
आस्था, विश्वास, करुणा, प्यार हमने खो दिए
और क्या–क्या खोएँगे ऐश्वर्य पाने के लिए

कवि का यह बेबाक प्रश्न – **'और क्या–क्या खोएँगे ऐश्वर्य पाने के लिए'** सचमुच धरती को उजाड़कर चाँद पर जाने को लालायित आज के लालची आदमी को जगाने के लिए है। लेकिन जब आदमी की आँखों पर ऐश्वर्य की पट्टी बँध जाती है, तब वह देह का गुलाम होकर मरुस्थल में भटकता–भटकता प्यासा ही दम तोड़ देता है।

पर्यावरण असन्तुलन की बहुत बड़ी सच्चाई कवि शचीन्द्र जी अपने इस मुक्तक में सहज रूप में हम तक पहुँचा देते हैं–

अब फ़सल से मेघ की टकराहटें बढ़ने लगीं
फागुनों में पूस की अकुलाहटें बढ़ने बगीं
आँधिया करने लगी अमराइयों को निर्वसन
जेठ से पहले बहुत गरमाहटें बढ़ने लगीं

आधुनिकता का दुष्परिणाम आज तीर्थों की पवित्रता को भी तो कलुषित करता जा रहा है, अतः कवि व्यग्र होकर कह उठता है–

तीर्थ का वातावरण वैसा नहीं अब शुद्ध है
वायु–जल–आलोक सबकी शुद्धता अवरुद्ध है
भीड़ भवनों की बढ़ी है, प्राकृतिक सुषमा घटी
घटे वन–उपवन, प्रकृति उनसे हुई ज्यों क्रुद्ध है

आज हम पर्यावरण का दोहन करने में बहुत उत्सुक नज़र आते हैं। वन कट रहे हैं, खनिज़ पदार्थों की लूट मची है। पर्वत, नदी, समुद्र, जंगल कुछ भी मनुष्य की लोभी दृष्टि से अछूते नहीं रह गए हैं। प्राकृतिक संसाधन, खनिज पदार्थ, अन्न, जल इत्यादि सब कुछ तो पर्यावरण से ही उपजता है। धरती माता ने तो अपने कर्त्तव्य का पालन किया है, हमें विभिन्न तरह से पोषण व साधन प्रदान किए हैं, लेकिन हम ही अपने कर्त्तव्य को भूल गए हैं। धरती माता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना तो दूर, हम उसका ही बूरी तरह से दोहन व शोषण करने में लगे हैं और यह कार्य किसी अत्याचार से कम नहीं है।

लेकिन आकांक्षाओं की पूर्ति के समान्तर अब समाज में पर्यावरण की रक्षा की चिंता भी बलवती होती जा रही है। समकालीन साहित्यकारों को भी 'पर्यावरण–संरक्षण' की बेहद चिंता है, और वे अपनी लेखनी के माध्यम से जन–जागरण का कोई भी अवसर नहीं चूकते। इसी क्रम में डॉ० योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' के ये सुन्दर दोहे देखिये, जिनमें 'पर्यावरण–संरक्षण' के लिए जनमानस को प्रेरित किया गया है –

रक्षित यदि पर्यावरण, बचे रहेंगे प्राण।
बने विश्व–संदेश यह, तब होगा कल्याण।।

ज्यों–ज्यों बढ़ती गंदगी, त्यों–त्यों बढ़ते रोग।
लड़ें प्रदूषण से अगर, सुख पाएँगे लोग।।

यह विकास कैसा भला, जिसमें छिपा विनाश।
जलने लगी वसुंधरा, सुलग रहा आकाश।।

जल, जमीन, जंगल सभी, कुदरत के वरदान ।
नष्ट सभी को कर रहा, मनुज बना अनजान।।

जल, हरियाली, वायु मिल, जग को देते प्राण।
इनकी रक्षा यदि करें, सुखी रहें इंसान।।

गाँव, नगर बनते गए, होता गया विकास।
दूर नहीं अब वह समय, टूटेगी हर आस।।

बढ़े प्रदूषण देश में, करें न ऐसे कर्म।
पर्यावरण बचाएँ सब, यही राष्ट्र का धर्म।।

भौतिक सुख किस काम के, रोगी अगर शरीर।
नीर, वायु यदि शुद्ध हों, मिट जाए हर पीर।।

शांति न मिलती है कहीं, कहाँ जाय इंसान।
शोर, शोर ही शोर है, संकट में है जान।।

धूल, धुआँ जितना बढ़े, अँधे होंगे लोग।
मिटे प्रदूषण जगत् से, तभी मिटेंगे रोग।।

भटकाव के भँवर में राष्ट्रधर्मी कवि हम सबको जगा रहा है–

घर–घर तुलसी हो लगी, द्वारे बरगद नीम।
पीपल छाया निकट हो, रहता दूर हकीम।।

सदा सर्वदा से रहा, वन बादल सम्बन्ध।
चली कुल्हाड़ी पेड़ पर, टूट गए अनुबन्ध।।

हरी भरी धरती रहे, ले लें हम संकल्प।
वृक्ष लगायें मिल सभी, दूजा नहीं विकल्प।।

पशु–पक्षी, मनुजात के, तरुवर शाश्वत मित्र।
सरिता, पर्वत, घाटियाँ, कैसे सुन्दर चित्र।।

झोले पॉलिथीन के, प्लास्टिक का सामान।
धरती बंजर कर रहे, बंधु इन्हें पहचान।।

यह धरती रत्नगर्भा है और हम सब इसकी ही संताने हैं– **'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'**। बंकिम चंद्र चटर्जी की **'सुजलां सुफलां मलयज शीतलाम्'** वाली धरती की कल्पना सचमुच ही बड़ी मनोहारी है। वह जीवनदायिनी है, पावन है और बिना किसी भी भेदभाव के सब पर अपना स्नेह

लुटाती है, लेकिन विडंबना यह है कि हम धरती की इस कृतज्ञता के बदले उसके प्रति और अधिक क्रूर व्यवहार कर रहे हैं।

डॉ0 बलजीत सिंह अपने इस गीत के माध्यम से धरती माता के प्रति कृतज्ञता का भाव बहुत सुन्दर ढंग से व्यक्त कर रहे हैं–

धरती हम तेरे गुण गाएँ।
धरती तू जग की जननी है,
पावन तेरी हर करनी है,
दुनिया तुझसे ही पलनी है,
वंदनीय तू, पूजनीय तू, मेरे चरणों में झुक जाएँ।
धरती हम तेरे गुण गाएँ।।

नहीं किसी में तुझ–सा धीरज,
तुझसे सारे जग की सज–धज
चंदन–सी महके तेरी रज,
फूलों–जैसे खिलकर हम भी, सारी दुनिया को महकाएँ।
धरती हम तेरे गुण गाएँ।।

तुझको कोई ग़ैर नहीं है,
तुझे किसी से बैर नहीं है,
तुझ बिन जग की खैर नहीं है,
तेरी रक्षा में सब रक्षित, सब नादानों को समझाएँ।
धरती हम तेरे गुण गाएँ।।

डॉ0 गणेश दत्त सारस्वत अत्यन्त सरल एवं सहज शैली में दोहों के माध्यम से सीख देते हुए कहते हैं–

अगर चाहते हो – रहो, सदा स्वस्थ – सानंद।
तो दोहन तुम प्रकृति का, करो तुरत ही बंद।।

हरे–भरे हैं वृक्ष ये, हरित–क्रान्ति साकार।
इन्हें काटकर मत करो, अपने पर ही वार।।

कहीं प्रलय का दृश्य है, जल का कहीं अभाव।
ग़लत नियोजन ने दिए, कितने गहरे घाव।।

जागरुक हो हम सभी, करें प्रदूषण बंद।
अगर चाहते हैं मिले, पग–पग परमानंद।।

डॉ0 नरेंद्रनाथ लाहा ने गागर में सागर भरते हुए अपनी एक क्षणिका के माध्यम से जल संकट पर अत्यन्त सटीक एवं व्यंग्यपूर्ण टिप्पणी की है–

पहले बूँद – बूँद से
घड़ा भर जाता,
अब बूँद – बूँद से
गिलास नहीं भर पाता।

बाल–साहित्य के माध्यम से भी रचनाकारों ने बाल एवं युवा वर्ग को पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रेरित किया है। छोटी–छोटी सरल कविताओं के द्वारा युवा पीढ़ी को पर्यावरण को बचाने की लड़ाई से जोड़ने का सफल प्रयास किया गया है। डॉ0 सतीश चंद्र भगत की इस कविता में वृक्षों से मित्रता करने की प्रेरणा दी गई है–

फुरसत के हर क्षण का हम उपयोग करें, कुछ लाभ उठायें।
आओ चले बाग में साथी, बैठें, पेड़ों से बतियायें।।
पेड़ हमारे सच्चे साथी हमको मीठे फल देते हैं,
इनके कारण बनते बादल जो सबको जल देते हैं।
केवल इतना नहीं और भी, ये हम सबको सुख पहुँचाते,
इन्हीं पेड़–पौधों के कारण, ताजा शुद्ध हवा हम पाते।
हर कीमत पर इन्हें बचायें स्वस्थ रहें गायें मुस्कायें।
आओ चले बाग में साथी, बैठें, पेड़ों से बतियायें।।

विशेष पन्त की एक छोटी सी कविता नन्हें–मुन्ने बच्चों के कोमल मन पर प्रभात डालकर उन्हें पेड़ लगाकर 'पर्यावरण–संरक्षण' के लिए प्रेरित करती है–

धरती को महकाते पेड़,
मिलकर पेड़ लगाएंगे।
पेड़ों के है लाभ बहुत,
सबको ये समझाएंगे।।
वर्षा इनसे होती है,
धूप में देते छाया।
प्रकृति के उपहार पेड़,
जीवन इनमें है समाया।

हरियाली बढ़ाते पेड़,
सब को ये बतलाएंगे।
धरती को महकाते पेड़,
मिलकर पेड़ लगाएंगे।।

'पर्यावरण–संरक्षण' के उद्देश्य से पर्याप्त बाल–साहित्य रचा गया है। पर्यावरण का संरक्षण मुख्य रूप से वर्तमान पीढ़ी द्वारा भविष्य की पीढ़ी को सौंपने योग्य धरोहर से संबंधित है। वास्तव में पृथ्वी के पर्यावरण को दूषित कर रही मानव गतिविधियों को नियंत्रित करना एक दुष्कर कार्य है, किन्तु मानव जाति का अस्तित्व बचाना है, तो हमें अपनी हानिकारक गतिविधियों पर अंकुश लगाना ही होगा। यह कार्य शोषण के स्थान पर पोषण के आचरण द्वारा सम्पन्न होगा। हमें यह सोचना होगा कि आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए हम क्या दे रहे हैं। भौतिकता और उपभोक्तावाद को अपनाना आज का आदर्श बन गया है और पर्यावरण का संकट उपभोक्तावाद की अनोखी सौगात है और इसे झेलना हमारी नियति बनती जा रही है।

डॉ0 योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' ने भी अपने इन दोहों में 'पर्यावरण–संरक्षण' के पुनीत यज्ञ में अपनी–अपनी विनम्र आहुति प्रदान करने का प्रेरक आह्वान किया है–

कहती धरती मनुज से, सुन मेरी आवाज।
कल के जीवन के लिए, सजग बनो तुम आज।।

सबको लड़नी है यहाँ, आज लड़ाई एक।
दैत्य–प्रदूषण ख़त्म हो, लक्ष्य सभी का नेक।।

नर–नारी आबाल वृद्ध, कर लें यह प्रण आज।
पर्यावरण बचाएँ हम, उन्नत बने समाज।।

पर्यावरण संतुलन आज की एक गम्भीर आवश्यकता है, जिसे बनाने में हम सभी को अपना सहयोग देना ही होगा। केवल पर्यावरण के संरक्षण द्वारा ही हम अपने जीवन, उसके अस्तित्व व मानव जीवन की गरिमा की रक्षा कर सकते हैं।